कहानी

लावारिस

पूजा अग्निहोत्री

इकतीस दिसंबर की रात थी. आज मल्टी में भव्य आयोजन था. इसी लिए खाने की तलाश में वह रात दस बजे ही आकर बैठ गया था, अमूमन पार्टी ग्यारह-साढ़े ग्यारह बजे समाप्त हो जाती और फेंका हुआ जूठा, किन्तु स्वादिष्ट भोजन मिल जाता. पेट भी अच्छे से भर जाता. लेकिन उसे पता नहीं था कि आज तो पार्टी बारह के बाद शुरू होने वाली थी.

उसने बाहर से ही एक-दो चक्कर हॉल के लगाए, थोड़ा उचककर खिड़की से भी झाँका. सामने टेबल पर बड़ा-सा तीन मंज़िला केक रखा हुआ था, बहुत खूबसूरत सजावट के साथ. लोग भी एकदम सजे-धजे थे, जैसे कपड़ों की दुकानों पर प्लास्टिक के पुतले. खाने के डोंगे तहज़ीब से नीचे जल रही लौ की गर्माहट के साथ शांति से खोले जाने का इंतज़ार कर रहे थे. किसी को खाने की तत्परता नहीं थी पर वह भूखा था, अंतड़ियाँ कुलबुला रही थीं.

तभी चौकीदार की नज़र उस पर पड़ी. उसने हाथ पकड़ा. नन्हा गोलू एक हाथ से पैंट सँभाले उसके पीछे-पीछे घिसटता हुआ गेट से बाहर खदेड़ दिया गया.

उसने अनुनय-विनय की, कहा कि वह सुबह झाड़ू भी लगा देगा. पर झाड़ू वाला तो आता ही था, इसलिए चौकीदार भद्दी-सी गाली देता हुआ वापस अंदर चला गया.

ठंड बहुत थी. इसलिए बचने को वह पानी की टंकी के नीचे सीढ़ियों से पीठ टिकाकर बैठ गया. ठंड मज्जा तक ठिठुरा देने वाली थी, पर भूख का वजन शायद ठंड से अधिक था. वह अपने आप को बहलाने के लिए अपनी माँ के बारे में सोचने लगा. पहले भी जब कभी इंतज़ार करना होता, वह माँ की याद के खिलौने से खेल कर समय काट लेता.

उसने कभी अपनी माँ को नहीं देखा था. चाल वालों से सुना था कि छठवें बच्चे को जन्मते समय वह मर गई थी.

उसे माँ का चेहरा स्पष्ट याद नहीं, पर अपने मन में माँ की एक छवि बना रखी थी. पता नहीं क्यों, उसे लगता कि उसकी माँ को पंख उगे थे. जब कभी सपने में माँ आती, तो पंखों वाली ही आती, खूब प्यार करती. तब न भूख लगती, न ठंडी.

सीढ़ियों के नीचे वह बैठा रहा. उसे ठंड लग रही थी.

चौकीदार के कुत्ते के साथ उसने अपना बोरा बाँटना चाहा. पहले तो वह बड़ा भाव खाता था, देखते ही दाँत निकालकर गुर्राता, पर इस बार कूँ-कूँ करके खुद ही पास आ गया, मानो ठंड से बचने का आग्रह कर रहा हो.

गोलू ने बोरा ओढ़ने का प्रयास किया, पर कुत्ता उघड़ गया. उसे अपराधबोध हुआ, तो उसने बोरा फिर से ढंग से कुत्ते को ओढ़ाकर खुद उकड़ूँ बैठकर आपस में हाथ रगड़ते हुए गर्म रहने की कोशिश की.

बीच में एक बार फिर हॉल के चक्कर की सोची, पर इस बार चौकीदार मुस्तैद दिखा. वापिस आकर फिर से खुद को गर्म रखने का विफल प्रयास किया.

समय काटना बहुत मुश्किल लग रहा था. एक बार मन में आया कि वह वापस खोली में चला जाए—जहाँ कम से कम चार दीवारें तो थीं.पर अगले ही क्षण उसे याद आया शराब में डूबा हुआ वह पिता, जिसे उसकी उपस्थिति से कोई लेना-देना नहीं था, और मंझला भाई, जिसकी आँखों में एक अजीब-सी भूख झलकती थी, वह भूख जो रोटी की नहीं थी.

मंझला भाई अक्सर रात में उसके पास आकर लेट जाता और जब वह डरकर सहम जाता, तो उसे डाँटकर चुप करा देता. वह जानता था कि घर—जो हर किसी के लिए एक सुरक्षित जगह होता है,उसके लिए डरावनी अँधेरी गुफा जैसा था.

मंझले भाई की आँखों में कभी भाई जैसा स्नेह नहीं झलकता था—केवल अधिकार, बिना ज़िम्मेदारी के. वह न तो उसे खाना देता, न कपड़े, न प्यार... केवल एक अस्तित्व चाहता था, जिसे वह जैसे चाहे वैसे रौंद सके.

शराबी पिता के खयाल से उसने घर लौटने का विचार त्याग दिया. बाहर की ठंड, भूख और अकेलापन फिर भी घर के उस डरावने सन्नाटे से बेहतर लगा.

अब वह फिर उकड़ूँ बैठकर घुटनों में सिर रखे, खुद को गर्म रखने की कोशिश करने लगा. दिनभर इधर-उधर की खाक छानता थका हुआ भी था. अब नींद उस पर तारी हो रही थी. भूख और ठंड अपने होने का ठोस सबूत दे रही थीं. अब श्रवण और घ्राण-इंद्रियाँ भी सक्रिय हो चली थीं.कानों में डोंगे खोले जाने की आवाज़, नासिका में मसालेदार खाने की महक आने लगी. पर अभी तो दौर शुरू हुआ था. कम से कम आधा-पौन घंटा और लगेगा.

उसने देखा-उँगलियाँ काम करना बंद कर रही हैं और अकड़ रही हैं. अकड़न धीरे-धीरे आगे बढ़ती जा रही है. खाना थोड़ी देर से फेंका जाएगा. तब तक वह घुटनों में मुँह छुपाकर माँ की आभासी गोद में चला गया. आज भूख, ठंड और नींद -तीनों खुद को श्रेष्ठ सिद्ध करने पर आमादा थीं. इस संघर्ष में नींद विजयी हुई. तभी उसे अहसास हुआ कि कोई नाज़ुक हाथों से उसके बालों को सहला रहा है. ढुलक कर सूख चुके आँसुओं से भरे गालों पर चुंबन की गर्माहट महसूस हुई. उसने आँखें खोलीं—यह तो माँ थी, जो हमेशा सपने में आती थी.

माँ ने उसे एक सुंदर वस्त्र पहनाया और गोद में उठा लिया. उसने पीठ पर हाथ फिराकर पंख टटोलने की कोशिश की—पंख तो नहीं थे, पर उसे लग रहा था जैसे वह हवा में उड़ रहा हो.

अब उँगलियों में गरमाहट महसूस हो रही थी. पूरा शरीर गरम फर वाले कपड़ों की नरमी और गरमी से भर गया था.जैसे ही माँ उसे गोद में लेकर हॉल में पहुँची, उसने देखा—आसपास की औरतें भी उनके पास आ गईं और बारी-बारी उसे प्यार-दुलार करने लगीं.

अब न भूख रही, न ठंड और न नींद.

उसने दोनों हथेलियों में माँ का चेहरा भर लिया और कहा—माँ, अब मुझे यहाँ मत छोड़ना....

माँ ने उसे सीने से लगाकर, दोनों हाथों से भींचकर कहा—कभी नहीं....

सुबह मल्टी बिल्डिंग के चौकीदार ने नगर पालिका निगम को फोन करके बताया—

पानी की टंकी के पास एक लावारिस लाश पड़ी है... आकर ले जाएँ....

क्लास by बड़े भाई

तो अब बताइए आपके पास कौन सा ज्ञान है

संदीप द्विवेदी
कवि/प्रेरक वक्ता/स्किल ट्रेनर

छोटे भाई, इस दुनिया में सब ज्ञानी हैं, सबके पास खूब खूब ज्ञान है यह बात हमने चलते फिरते कभी न कभी या हमेशा ही सुनते होंगे पर यह मैंने आपसे इसलिए नही कह रहा हूँ कि आज के आर्टिकल का उद्देश्य इस बात का खंडन करना है और अगर चाहूँ भी तो खंडन किया भी नही जा सकता वाकई हर किसी को बहुत ज्ञान है और जो जहाँ पर हैं उसी ज्ञान के ही कारण हैं और यहीं से मेरे आर्टिकल का उद्देश्य निकलता है. जैसा कि मैंने कहा कि हर कोई जो जिस जगह है वो अपने ज्ञान के ही कारण है. इस मतलब ज्ञान भी तरह तरह के होते होंगे. तो आज मैं उसी के विषय पर बात करना चाहूंगा. छोटे भाई तीन तरह के ज्ञान इस दुनिया में मिलते हैं. और वाही हमारी जगह तय करते हैं. एक ज्ञान होता है जिसे कह सकते हैं भंवर ज्ञान.. ह ह ह

ऐसा ज्ञान जिससे कुछ विशेष मिलने वाला नही होता लेकिन इसमें हमारी रूचि काफी होती है. जैसे बगल वाले पडोसी की जो कार है वो कितने साल की हो गयी होगी, शाहरु? खान की सलमान खान से क्यों नही बनती या फिर क्यं साथ आ गये. इस तरह के ज्ञान समझ रहे होंगे. इनकी श्रृंखला अनंत है. एक ज्ञान होता है जिसे मैं विषय ज्ञान कहता हूँ. इस ज्ञान में जो आपकी पढाई है जिसे आप डॉक्टर, आर्ट्स, विज्ञान का अध्ययन कर रहे हैं उसमें विशेषज्ञता प्राप्त कर रहे हैं यानि आपके शैक्षणिक विषय, आपकी डिग्री डिप्लोमा सब इसी में आ सकते हैं. और तीसरे प्रकार का ज्ञान होता है प्रेरणा ज्ञान. इस ज्ञान से हमारे भीतर कुछ करने का भाव जागृत होता है. यही ज्ञान हममें हर परिस्थिति में धैर्य बंधाता है, संघर्ष करने का मेहनत करने कुछ हासिल करने का हौसला भरता है. यह ज्ञान हमें महापुरुषों की जीवनियों से , विचारों से, प्रेरक कहानियों किस्सों से, हमारे गुरुजनों से , माता पिता से. अच्छी किताबों से मिलता है. तो यह थे तीन तरह के ज्ञान, अब आप बताइए कि अभी आप किस ज्ञान की तरफ आप रूचि ले रहे हैं और विचार करिये कि आपको अपने इस अनमोल जीवन को किस ज्ञान से भरना उचित रहेगा. भंवर ज्ञान से या विषय और प्रेरणा ज्ञान से.

पुस्तक चर्चा

रचना के पाट को चौड़ा कर बंजर ज़मीन को उर्वरा बनाती ग़ज़लें

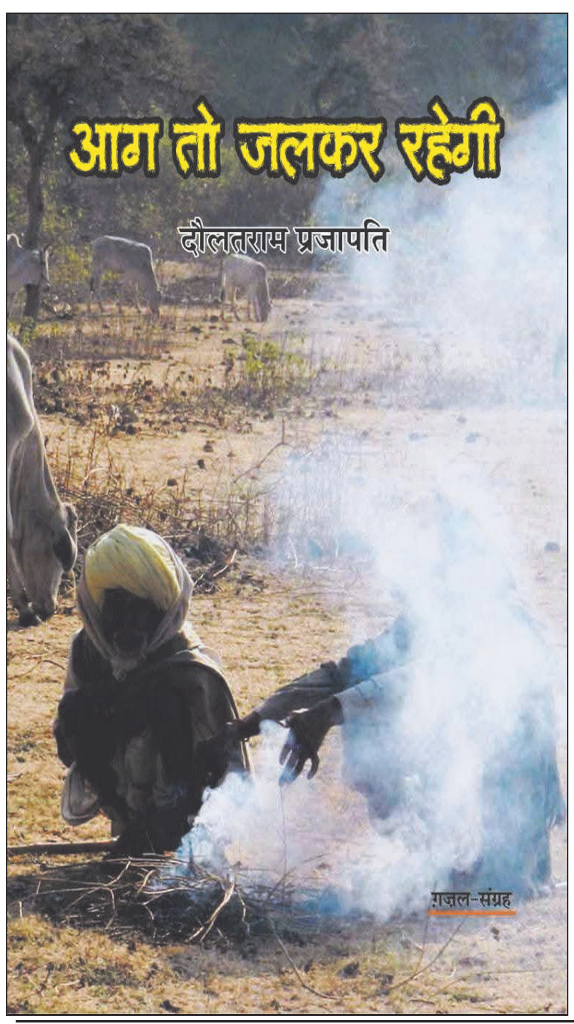

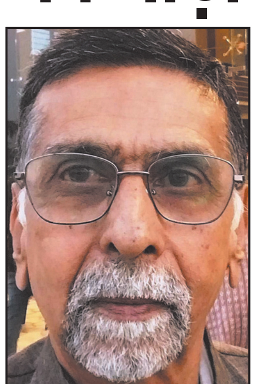

नरेश जैन

सुपरिचित शायर, गम्भीर और सजग कवि दौलत राम प्रजापति का चौथा नया ग़ज़ल संग्रह आग तो जलकर रहेगी% आया है. हिन्दी में नई कविता या आधुनिक कविता प्राय: अतुकांत लिखी जाती है. इसके बाद अगर कोई सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली काव्य विधा है, तो वह ग़ज़ल है. हिन्दी ग़ज़ल की एक स्वतंत्र पहचान बन चुकी है. हिन्दी ग़ज़लों की भाषा और शब्दावली को हिन्दवी कहा जा सकता है, जो हिन्दी और उर्दू के बीच सेतु की तरह है. दौलतराम भी अपनी ग़ज़लों से हिन्दवी को समृद्ध कर रहे हैं.

हिन्दी ग़ज़ल उर्दू ग़ज़ल के पारम्परिक प्रभाव से मुक्त है लेकिन इसमें समकालीनता वैसे ही है जैसी नई कविता में-अपने समय की सच्चाइयों को उजागर करती अभिव्यक्ति. ग़ज़ल की लोकप्रियता इसलिए बढ़ती गई कि इसमें जनसाधारण के लिए सुबोध और सुगम्य भाषा में सम्बोधित किया. जनसाधारण के सुख-दुख को, आशा-निराशा को, क्षोभ-क्रोध को आवाज़ दी. दौलतराम ग़ज़ल की इसी जनवादी परम्परा के रचनाकार हैं. समालोचक जय चक्रवर्ती लिखते हैं-इन ग़ज़लों में बोल्डनेस है जो हमें सच को सच और झूठ को झूठ कहने का साहस प्रदान करती है. नचिकेता लिखते हैं-दौलतराम के ऊपर-नीचे, दाएँ-बाएँ, आगे-पीछे कोई गॉड फॉदर नहीं है, वे अपने पथ पर अकेले चल रहे हैं और नई-नई ज़मीन तोड़ते हुए अपना रास्ता भी खुद बना रहे हैं....यह सही है कि दुष्यंत कुमार और अदम गोंडवी ने जो बुनियाद रखी थी, दौलतराम ने उसी राह पर चलते हुए रास्ते के सारे कंकड़ पत्थर और घास-फूस को साफ कर ग़ज़ल रचना के पाट को बेहद चौड़ा किया और बंजर ज़मीन को बेहद उर्वरा बनाया है.

दौलतराम विदिशा जिले के एक छोटे से कस्बे लटेरी की कुम्हार गली में रहते हैं जबकि हिन्दी के गॉड फादर राजधानियों में महानगरों रहते हैं. वे तो इस देश की मिट्टी के बेटे हैं- हम मिट्टी में खेले-कूदे मिट्टी ने सौगातें दीं/

कोठी- चूल्हा- बर्तन-भांडे और कनस्तर मिट्टी के./ देख बहारों के मौसम तो महलों के दरबारी हैं/ सच पर्दों के बाहर लाते ये अपने घर मिट्टी के. वे प्रखर सामाजिक चेतना सम्पन्न हैं और स्पष्ट राजनीतिक समझ रखते हैं. जन के प्रति उनकी प्रतिबद्धता की आँच हर ग़ज़ल में महसूस की जा सकती है. कुछ अशआर देखिए-निर्दोषों के माथे मढ़कर अपराधी की संज्ञाएँ/ गाँव गली में सीना ताने फिरते हैं हत्यारे क्यों ? या महज़ कीचड़ उछाला जा रहा है/ सियासत की मची है फाग देखो !

समकालीन राजनीतिक परिदृश्य में जन समस्याओं पर गंभीर विमर्श का अभाव है और केवल एक दूसरे पर स्तरहीन टिप्पणियाँ की जा रही हैं? तब कवि की जिम्मेदारी है कि वह सच को सामने लाए-क्रूर समय के सच को लिखना अपनी जिम्मेदारी है/ शब्द हमारे मुज़रिम बनकर अय्यारों में बैठे हैं! इन ग़ज़लों की खूबी ये है कि उनको पढ़कर ऐसा नहीं लगता कि अरे! ये तो कहीं सुना है. उनका अपना खुद आविष्कृत मुहावरा और तेवर है. एक सजग रचनाकार केवल असत् पर उँगली नहीं रखता बल्कि सत् की प्रतिष्ठा कैसे हो इसका संकेत करता है. वे लिखते हैं-जब भी जनमत ज़बान खोलेगा/ हर तरफ इंकलाब बोलेगा./ हम जो हो जाएँ एक देखेंगे/ कौन नफरत के रंग घोलेगा !/ सच का परचम उठाए चल दौलत फिर ज़माना भी साथ हो लेगा.

इन ग़ज़लों को पढ़ते हुए हम समय के सारे राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक पाखंड और झूठ को भस्म कर देने वाली आग की ताप को महसूस करते हैं, तो हमारा ध्यान उन शेरों पर भी गया जिनमें एक अलग तरह का भाव बोध है और जो महत्वपूर्ण है.-अगर यह चाहते हो तुम किसी का दिल नहीं टूटे/ जिता कर अपने दुश्मन को खुशी से हार रख लेना. कवि का संवेदनशील मन जानता है कि दुश्मन हमेशा दुश्मन नहीं होता-%चुप्पियों में बोलता है अब भी रिश्तों का सबब/ बीच में दीवार है पर भाइयों की बात है.% ये पंक्तियाँ जितनी एक परिवार की व्यथा बयान करती हैं उतना ही दो देशों के बीच के यथार्थ को भी.

सक्रिय रचनाकार घावों की पीड़ा को सतत महसूस करते रहना चाहता है. ये भाव दैहिक नहीं हैं बल्कि दूसरों के सीने पर होने वाले आघात से चेतना के ऊतकों पर बनते हैं. कवि का कोमल मन पीड़ित मानवता के प्रति सहानुभूति और समानुभूति से काव्य सृजन करता है. संग्रह में ऐसे कितने ही शे%र हैं जो कवि की बोल्डनेस के बीच माइल्डनेस को भी उतनी ही शिद्दत से व्यक्त करते हैं.

आग तो जलकर रहेगी (ग़ज़ल संग्रह)
दौलतराम प्रजापति
प्रथम संस्करण-2̇25
मूल्य-199 रुपए
बोधि प्रकाशन, जयपुर (राजस्थान)

कविता

दस्तक सर्द हवाओं की

श्रीति राशिनकर

सर्द हवाओं ने जब दस्तक दी
खिड़की दरवाजे बंद हुए
वृक्ष लगे ठिठुरने
पक्षी घोंसलों में दुबके
नर्म दूब ओस से सिहर गई
सर्द हवा ने जब दस्तक दी !
धूप आंख मिचौली खेलें
गुलाब , सेवंती रंग बिखराए
शाम रजाई ओढ़े लेटी
नन्ही चांदनी डर सी गई
सर्द हवा ने जब दस्तक दी !
हो चली खाली पगडंडी
घर घर रसोई लगी महकने
केशर दूध कड़ाही उबले
रातें जल्दी सोने लगी
सर्द हवा ने जब दस्तक दी !!

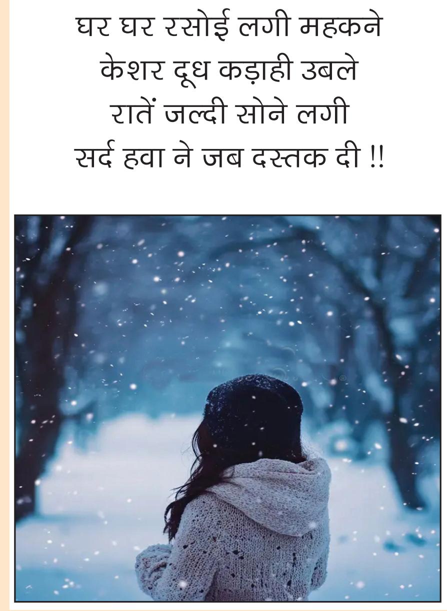

लघु कथा

रात की देह पर उजाला

पवन शर्मा

आदिल सिग्नेचर फ्लोर पर खड़ा था, शहर की रात का अँधेरा जैसे उसके भीतर भी धीरे-धीरे घुल रहा हो. उसने मोबाइल की स्क्रीन पर घड़ी देखी - रात के दो बज रहे हैं. इस समय वह अकेला था, फिर भी उस अजनबी अँधेरे में कुछ पारिवारिक-सा था, जैसा हर ठंडी रात में महसूस होता था.

जिया तुम कहाँ हो?

आदिल ने खिड़की से बाहर देखकर खुद को ही पूछा. पिछले दो हफ्तों से वे दोनों एक-दूसरे से दूर हैं और इस दूरी ने उसे भीतर ही भीतर बहुत कुछ खोने जैसा महसूस कराया है.

उसने जिया का नंबर डायल किया. घंटी बजने के बाद एक हल्की सी आवाज़ आई, हैलो?

यस, जिया? आदिल ने पूछा, उसकी आवाज़ में हल्की घबराहट थी, जैसे वह बहुत कुछ कहना चाहता हो, लेकिन शब्द बेमानी लग रहे थे.

हाँ, मैं हूँ. तुम कहाँ हो?

मैं अपने फ्लैट में हूँ... वहीं, जहाँ तुम हमेशा आती थी. आदिल ने धीमे से कहा, तुम्हारी यादें इस फ्लैट के हर कोने में हैं, लेकिन तुम नहीं हो.

जिया चुप रही, कुछ पल की खामोशी के बाद बोली, आदित्य, मैं... मैं इस वक्त भी अपनी राह ढूंढने की कोशिश कर रही हूँ. मेरे लिए यह आसान नहीं है.

क्या तुम सोचती हो कि मैं समझ नहीं सकता?... हमने कितनी बातें की थीं जिया. कितनी बार सोचा था कि जब हम साथ होंगे, तो शायद किसी रात, किसी अँधेरे में हम अकेले नहीं होंगे. मैं जानती हूँ. जिया ने कहा, लेकिन कुछ चीज़ें हमें तय करनी होती हैं. रात की तरह. देखो, हम दोनों एक अँधेरे में हैं, आदिल, लेकिन क्या तुम समझते हो कि उस अँधेरे में हम साथ नहीं चल सकते?

लेकिन रात की देह पर तो उजाला होता है, जिया. आदिल ने धीरे से कहा, जैसे यह शब्द खुद ही उसके भीतर से निकल कर उसके होठों तक आ गए हों, हर रात के बाद कोई न कोई उजाला होता है.

जिया की आवाज़ में एक हलका-सा बदलाव आया, उजाला... और यह अँधेरा, शायद हमें एक दूसरे से कुछ समय की दूरी की जरूरत है, ताकि हम उस उजाले को सही से देख सकें.तुम यह क्यों कह रही हो? आदिल की आवाज कठोर हुई, तुम मुझे छोड़ रही हो क्या?

नहीं, आदिल. जिया ने एक गहरी साँस ली, मैं खुद को ढूँढ़ने जा रही हूँ. यह दूरी सिर्फ हमें और बेहतर बनाएगी. क्या तुम समझ सकते हो? मुझे एक और मौका चाहिए, अपनी खुद की पहचान बनाने का.

आदिल चुप रहा, वो जानता है कि जिया और वह एक दिन उस उजाले के साथ लौटेंगे.

कविता

दादी के बर्तन

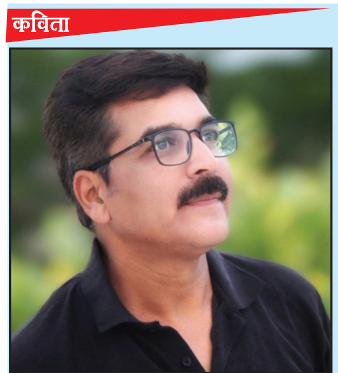

सुधीर महाजन

त्योहार हो या जापे के लड्डू
सब इसी में तो बनाती थी
तुम्हारी दादी

पता है यह
एल्युमिनियम का कटोर दान
कभी रोटियां रखने के काम न आया

हाँ तुम्हारे दादा की
गुल्लक जरूर बन गया था यह
कहते हुए वह खिलखिलाई

ये पीतल का घड़ा
तुम्हारे नाना ने
मुझे दहेज में दिया था .
पूरे परिवार ने पानी पिया है इससे
कहते हैं तांबा पानी को शुद्ध करता है
.

माना इन मर्तबान
का अब उपयोग नहीं होता
समय जो बदल गया है ..
कहते कहते उसने गहरी साँस ली

मगर यादें
वे कहाँ बदलती है बेटा
वे सहेजी हुई है
इन्हीं मर्तबानों में
वह बुदबुदाई .

इन्हें क्यों निकाल रहे हो ?
अरे वहीं रहने दो .
ये ज्यादा जगह नहीं घेरेंगे
रहने दो .

अरे तुम्हारे दादा तो
इसी गिलास में पानी पीते थे
उन्हें स्टील का गिलास कभी न
सुहाया

पर इतना बड़ा गिलास ?
उसने आश्चर्य से पूछा

हाँ ! बड़ा गिलास
घर के बड़े के लिये
कहते हुए उसके चेहरे पर
मुस्कान बिखर आयी

और ये परात

संपादकीय बोर्ड | प्रबंध संपादक : सुमीत माहेश्वरी, समूह संपादक : क्रांति चतुर्वेदी